

मंच पर उपस्थित आदरणीय अतिथिगण, मेरी प्रिय बहनों, युवा साथियों और उपस्थित सभी मित्रों,

राजस्थान की इस धरती पर आप सबके बीच आकर मुझे बहुत अपनापन महसूस हो रहा है। यह धरती साहस, संघर्ष और स्वाभिमान की धरती है। आज मैं इसी स्वाभिमान को महिलाओं के जीवन, उनकी स्वतंत्रता और उनके भविष्य से जोड़कर कुछ बातें कहना चाहती हूँ।

हम अक्सर सुनते हैं—“इक्कीसवीं सदी महिलाओं की सदी है।”

यह सुनकर अच्छा लगता है। लेकिन चार दशकों से अधिक समय तक महिलाओं के अधिकारों के लिए काम करते हुए मैंने सीखा है कि किसी सदी को महिलाओं की घोषित कर देने से वह महिलाओं की नहीं हो जाती।

हमें पूछना होगा—इस सदी में एक साधारण महिला के जीवन में क्या बदला?

क्या वह अपनी पढ़ाई पूरी कर सकती है?

क्या वह अपनी पसंद का काम कर सकती है?

क्या अपनी कमाई पर उसका अधिकार है?

क्या वह घर और बाहर बिना भय के जी सकती है?

और क्या उसके जीवन के फैसलों में उसकी अपनी आवाज़ सुनी जाती है?

इन प्रश्नों के उत्तर में ही छिपा है कि इक्कीसवीं सदी वास्तव में किसकी है।

बहनों और भाइयों,

मैं महिलाओं की क्षमताओं को लेकर बहुत आशावान हूँ। मैंने गाँवों में ऐसी महिलाओं को देखा है, जिन्हें कभी सार्वजनिक बैठक में बोलने का अवसर नहीं मिलता था, लेकिन अवसर मिलने पर उन्होंने पूरे गाँव की समस्याएँ उठाईं। मैंने उन लड़कियों का आत्मविश्वास देखा है, जिनकी शिक्षा ने केवल उनका जीवन नहीं बदला, बल्कि परिवार की सोच भी बदल दी।

भारत के आँकड़े भी इस परिवर्तन की कहानी कहते हैं।

उच्च शिक्षा में छात्राओं का नामांकन 2014-15 में लगभग एक करोड़ सत्तावन लाख था। 2021-22 में यह बढ़कर दो करोड़ सात लाख हो गया। यानी लगभग पचास लाख अधिक छात्राएँ उच्च शिक्षा तक पहुँचीं।

यह केवल संख्या की वृद्धि नहीं है। यह लाखों लड़कियों की बढ़ती आकांक्षाओं का प्रमाण है।

लेकिन हमें आगे पूछना होगा—डिग्री मिलने के बाद क्या होता है?

क्या उस लड़की को नौकरी मिलती है? क्या परिवार उसे दूसरे शहर जाकर काम करने देता है? क्या विवाह के बाद भी उसका पेशा जारी रहता है? क्या बच्चे होने के बाद उसे काम छोड़ना पड़ता है?

बेटी की डिग्री पर गर्व करना अच्छी बात है; उसके सपनों के साथ खड़े रहना उससे भी बड़ी ज़िम्मेदारी है।

अलवर के गाँव की बेटी हो या जयपुर की युवा पेशेवर—उसकी शिक्षा का अर्थ तभी पूरा होगा, जब वह अपने ज्ञान का उपयोग कर सके, अपनी पहचान बना सके और आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो सके।

साथियों,

2023-24 के राष्ट्रीय श्रमबल सर्वेक्षण के अनुसार, पंद्रह वर्ष और उससे अधिक आयु की महिलाओं की श्रमबल भागीदारी लगभग 42 प्रतिशत थी, जबकि पुरुषों की लगभग 79 प्रतिशत।

यह अंतर हमें सोचने के लिए मजबूर करता है।

और याद रखिए—श्रमबल में शामिल होने का अर्थ केवल नियमित वेतन वाली नौकरी होना नहीं है। इसलिए हमें महिलाओं के काम की संख्या के साथ उसकी गुणवत्ता, आय और सुरक्षा भी देखनी होगी।

राजस्थान की महिला खेत में काम करती है, पशुओं की देखभाल करती है, पानी और चारे की व्यवस्था करती है, घर संभालती है, बच्चों और बुजुर्गों की देखभाल करती है।

इतना कुछ करने के बाद भी जब उससे पूछा जाता है—“आप क्या करती हैं?”—तो वह कहती है, “मैं तो कुछ नहीं करती, घर पर रहती हूँ।”

यह हमारे समाज की दृष्टि का अन्याय है कि जिस श्रम पर परिवार टिका है, उसी श्रम को हम काम नहीं मानते।

हमें इस सोच को बदलना होगा।

महिलाओं के नाम संपत्ति हो। विरासत में उनका हिस्सा मिले। बैंक खाते तक पहुँच के साथ उस पैसे के उपयोग का अधिकार भी मिले। उद्यम शुरू करने के लिए ऋण, प्रशिक्षण और बाज़ार मिले।

और पुरुष साथियों से मैं कहना चाहती हूँ—घर और बच्चों की देखभाल में बराबर भागीदारी आपका दायित्व है। महिलाओं को सार्वजनिक जीवन में आगे बढ़ाना है, तो घर के भीतर ज़िम्मेदारियाँ बाँटनी होंगी।

बहनों और भाइयों,

महिलाओं के नेतृत्व के बारे में भी हमारे देश के आँकड़े बहुत कुछ बताते हैं।

भारत की पंचायती राज संस्थाओं में लगभग साढ़े चौदह लाख निर्वाचित महिला प्रतिनिधि हैं। कुल प्रतिनिधियों में उनकी हिस्सेदारी लगभग 46 प्रतिशत है।

यह बहुत बड़ी उपलब्धि है।

लेकिन 2024 के लोकसभा चुनाव में 74 महिलाएँ चुनी गईं—लगभग 13.6 प्रतिशत।

ज़रा सोचिए—पंचायत में लगभग आधी हिस्सेदारी, लेकिन लोकसभा में लगभग सात में केवल एक।

इस अंतर को कम करना हमारी लोकतांत्रिक ज़िम्मेदारी है।

पंचायतों का अनुभव बताता है कि संवैधानिक अवसर और संस्थागत समर्थन मिलने पर महिलाएँ बड़ी संख्या में नेतृत्व करने के लिए आगे आती हैं।

अब हमें यह भी सुनिश्चित करना होगा कि निर्वाचित महिला प्रतिनिधि स्वयं बैठक में बोलें, स्वयं फैसले लें, बजट समझें और प्रशासन से सीधे संवाद करें।

जिस महिला को जनता ने चुना है, अधिकार भी उसी के हाथ में होना चाहिए।

राजनीतिक दलों को महिलाओं को अधिक टिकट देने होंगे। नेतृत्व तैयार करना होगा। निर्णय लेने वाली समितियों में जगह देनी होगी। लोकतंत्र की गुणवत्ता इस बात से भी तय होगी कि उसमें महिलाओं की आवाज़ का कितना प्रभाव है।

मित्रों,

समानता की बात सुरक्षा के प्रश्न के बिना अधूरी है।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 2019–21 के अनुसार, अठारह से उनचास वर्ष की कभी विवाहित महिलाओं में लगभग 29 प्रतिशत ने पति द्वारा हिंसा का अनुभव बताया।

लगभग हर दस में तीन महिलाएँ।

इस संख्या के पीछे किसी का भय है, किसी की पीड़ा है और किसी की वर्षों की चुप्पी है।

जिस समाज में महिला अपने घर में सुरक्षित न हो, वहाँ सशक्तीकरण का दावा हमें बहुत सावधानी से करना चाहिए।

हिंसा को परिवार की इज्जत के नाम पर छिपाना बंद करना होगा। पीड़िता को चुप कराने के बजाय उसका साथ देना होगा। पुलिस, स्वास्थ्य सेवाओं, सहायता केंद्रों और न्याय व्यवस्था को संवेदनशील और जवाबदेह बनाना होगा।

और मैं स्पष्ट कहना चाहती हूँ—

महिला की स्वतंत्रता कम करके उसकी सुरक्षा सुनिश्चित नहीं की जा सकती।

बेटी को पढ़ने से रोक देना, नौकरी से रोक देना, बाहर जाने से रोक देना या उसका फोन छीन लेना समाधान नहीं है।

समाधान है—सुरक्षित परिवहन, बेहतर सार्वजनिक स्थान, प्रभावी शिकायत व्यवस्था और हिंसा करने वालों की जवाबदेही।

आज यही बात डिजिटल दुनिया पर भी लागू होती है।

लड़कियों को ऑनलाइन शिक्षा, कारोबार और संवाद के अवसर चाहिए। साथ ही उन्हें धमकियों, पीछा करने, निजी तस्वीरों के दुरुपयोग और एआई से बनाई गई अपमानजनक सामग्री से सुरक्षा चाहिए।

तकनीक का भविष्य तय करने वाली मेज़ पर महिलाओं की बराबर उपस्थिति होनी चाहिए। उनके अनुभव तकनीक के निर्माण और उसके नियमों—दोनों को प्रभावित करें।

प्रिय साथियों,

राजस्थान में पानी का प्रश्न भी महिलाओं की समानता से जुड़ा है।

जब कोई लड़की पानी लाने के कारण पढ़ाई का समय खोती है, या कोई महिला पानी की व्यवस्था में अपना दिन लगा देती है, तो यह उसके स्वास्थ्य, शिक्षा, आय और अवसरों का प्रश्न भी बन जाता है।

इसलिए जल संरक्षण की योजना बने तो महिलाओं की भागीदारी शुरुआत से हो। जोहड़ का काम हो, गाँव की जल समिति हो या पानी के उपयोग का निर्णय—महिलाओं का ज्ञान और नेतृत्व केंद्र में हो।

अलवर से जयपुर तक विकास की हर योजना में हमें पूछना चाहिए—इससे महिला का समय कितना बचेगा? उसकी आय कितनी बढ़ेगी? उसका जीवन कितना सुरक्षित होगा? निर्णय में उसकी हिस्सेदारी कितनी होगी?

इन्हीं प्रश्नों से विकास अधिक न्यायपूर्ण बनेगा।

आज मैं यहाँ से पाँच संकल्प लेकर चलने का आग्रह करती हूँ।

पहला—हर बेटी की पढ़ाई पूरी हो और उसे आगे का रास्ता चुनने की स्वतंत्रता मिले।

दूसरा—महिलाओं को सम्मानजनक काम, उचित आय और संपत्ति पर अधिकार मिले।

तीसरा—घर और देखभाल की ज़िम्मेदारियाँ परिवार तथा समाज मिलकर निभाएँ।

चौथा—हिंसा के प्रति चुप्पी टूटे और हर पीड़िता को समय पर सहायता तथा न्याय मिले।

पाँचवाँ—पंचायत से संसद और तकनीक से व्यापार तक, निर्णय लेने में महिलाओं की प्रभावी हिस्सेदारी हो।

इन संकल्पों की शुरुआत हमारे अपने घर से हो सकती है।

बेटे और बेटी के लिए एक जैसे नियम बनाकर। बेटी की महत्वाकांक्षा को गंभीरता से लेकर। बहू के पेशे का सम्मान करके। परिवार की संपत्ति में महिलाओं का अधिकार स्वीकार करके। और लड़कों को बचपन से सहमति, समानता तथा सम्मान सिखाकर।

बहनों और भाइयों,

मैं ऐसा भारत देखना चाहती हूँ जहाँ किसी लड़की को अपने सपनों के लिए अपराधबोध न हो।

जहाँ महिला अपनी बात कहे तो उसे सुना जाए। काम करे तो उसका मूल्य मिले। नेतृत्व करे तो उसके अधिकार स्वीकार किए जाएँ। अन्याय के विरुद्ध खड़ी हो तो संस्थाएँ उसके साथ खड़ी हों।

यही हमारे संविधान की समानता की भावना को जीवन में उतारने का रास्ता है।

मैं अपनी बात इस विश्वास के साथ समाप्त करना चाहती हूँ—

इक्कीसवीं सदी महिलाओं की तभी होगी, जब सबसे वंचित महिला भी कह सके—मेरे जीवन पर मेरा अधिकार है, मेरे श्रम का मूल्य है और मेरे निर्णय का सम्मान है।

अलवर से जयपुर तक, गाँव की चौपाल से विधानसभा तक, घर की देहरी से डिजिटल दुनिया तक—आइए, इस बदलाव को अपनी साझा ज़िम्मेदारी बनाएँ।

महिलाओं की बराबरी भविष्य का वादा बनकर न रह जाए; वह आज के निर्णयों में दिखाई दे।

बहुत धन्यवाद।

जय हिंद!